उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

हल्द्वानी

CHBC - 03

सर्टिफिकेट इन हर्बल ब्यूटि केयर

सौंदर्य समस्याओं का आयुर्वेदिक समाधान

विशेषज्ञ समिति

डा0 वी0 पी0 उपाध्याय
प्राचार्य, हिमालयीय आयुर्वेदिक कालेज
श्यामपुर , ऋषिकेष

डा0 एन0 पी0 सिंह
निदेषक, स्वास्थ्य विज्ञान विभाग
उत्तराखण्ड मुक्त विष्वविद्यालय,

प्रो0 आर0 बी0 सती
रोग एवं विकृति विज्ञान विभाग
ऋशिकुल राजकीय आयुर्वेदिक कालेज
हरिद्वार

डा0 जे0 एन0 नौटियाल
पंचकर्म विषेशज्ञ
दून चिकित्सालय देहरादून

डा0 वन्दना पाठक
आयुर्वेदिक मेडिकल आफिसर
कानपुर

डा0 सी0 एस0 भागवत
पूर्व रीडर द्रव्यगुण विभाग
आयुर्वेदिक मेडिकल कालेज
झांसी

डा0 सोहन खण्डूरी
षैक्षिक परामर्षदाता (अंषकालिक)
उत्तराखण्ड मुक्त विष्वविद्यालय,

डा0 समीर सिंह
लेक्चरर
उत्तराखंण्ड मुक्त विष्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

कार्यक्रम समन्वयक डा0 समीर सिंह डा0 सोहन खंण्डूरी

पाठ्यक्रम लेखन एंव सामग्री संकलन

डॉ0 अतुल सिंह नेगी
आर्युवेदिक मेडिकल ऑफिसर

डॉ0 समीर सिंह
लेक्चरर
उत्तराखण्ड मुक्त विष्वविद्यालय, हल्द्वानी

पाठ्यक्रम सम्पादन

डॉ0 ए0 के0 त्रिपाठी
काय चिकित्सा विभाग
गुरूकुल राजकीय आयुर्वेदिक कालेज, हरिद्वार

कुलसचिव उत्तराखण्ड मुक्त विष्वविद्यालय की ओर से मुद्रित एवं प्रकाषित।

मुद्रक

उत्तरायण प्रकाषन, हल्द्वानी

उत्तराखण्ड मुक्त विष्वविद्यालय

सर्वधिकार सुरक्षित। इस कार्य का कोई भी अंष उत्तराखण्ड मुक्त विष्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिये बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है। अधिक जानकारी उत्तराखण्ड मुक्त विष्वविद्यालय हल्द्वानी, नैनीताल से प्राप्त कर सकते हैं।

नोट– पाठ्यकम से संबंधित आपके सुझावों का हम स्वागत करते हैं। कृपया अपने सुझाव हमें इस पते पर भेजें–स्वास्थ विज्ञान विभाग, उत्तराखण्ड मुक्त विष्वविद्यालय हल्द्वानी, नैनीताल।

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
हल्द्वानी

CABC - 03

सर्टिफिकेट इन आयुर्वेदिक ब्यूटि केयर

सौंदर्य समस्याओं का आयुर्वेदिक समाधान

इकाई - 1

विभिन्न सौंदर्य विधियॉ - **01**

इकाई - 2

योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा का सौंदर्य में योगदान - **10**

इकाई - 3

आयुर्वेदिक आहार का सौंदर्य में महत्व - **22**

इकाई – 1
विभिन्न सौंदर्य विधियॉ

क्लिन्जिंग –

त्वचा की बाहरी रूप से देखभाल की प्रथम विधि क्लिन्जिंग मानी गई है। त्वचा पर रोजाना प्रदूषित वातावरण से धूल, जीवाणु, पसीना आदि एकत्रित होकर त्वचा को नुकसान पहुँचाते हैं। जिन्हें की रोजाना त्वचा से हटाना अनिवार्य होता है। मेकअप से पहले भी क्लिंजिंग सर्वप्रथम एवं अनिवार्य है।

साबुन और पानी त्वचा से ज्यादातर धूल–गंदगी को हटा देते हैं किन्तु इसके बाद भी अन्य क्लिंजिंग द्रव्यों की जरूरत पड़ती है जो त्वचा को सौंदर्य भी प्रदान करे और साथ ही कोई अपना दुष्प्रभाव भी न छोड़े।

यदि दिन में मेकअप किया हुआ है तो रात को मेकअप उतारने के लिए क्लिन्जिंग क्रिम, लोशन या दूध का प्रयोग करना चाहिए।

क्लिंजर द्वारा त्वचा पर हल्का, ऊपरी और बाहरी दबाव देते हुए मसाज करनी चाहिए। क्लिंजर से मसाज करते समय ज्यादातर ध्यान नाक, ठोढ़ी के नीचे, गर्दन और माथे पर देना चाहिए।

यदि कॉटन वूल का उपयोग क्लिंजिंग के लिए किया जा रहा हो तो वह आद्र होना चाहिए क्योंकि शुष्क पफॉटन वूल त्वचा की नमी को सोख लेता है। क्लिंजिंग की प्रक्रिया को 2 से 3 बार करना चाहिए जब तक की त्वचा ठीक तरह से सापफ न हो जाए। पहले किए गए गहरे मेकअप को उतारने के लिए क्लिंजिंग की प्रक्रिया भी ज्यादा समय तक करनी चाहिए।

क्लिंजिंग द्वारा चेहरे की त्वचा मसाज करने के लिए उपयुक्त हो जाती है। पारंपरिक रूप से आयुर्वेद में हर्बल पाऊडर, जिन्हें की 'उबटन' कहा जाता है, का उपयोग त्वचा की बाहरी सपफाई करने के लिए कहा गया है।

इन उबटनों को विभिन्न औषध्यि तरल द्रव्यों के साथ मिलाकर पेस्ट बनाया जाता है, पिफर उसकी एक पतली पर्त को त्वचा पर हल्के हाथों से लगाया जाता है।

टोनिंग –

क्लिंजिंग के पश्चात् हमेशा टोनिंग अवश्य करनी चाहिए। टोनिंग द्वारा त्वचा के समस्त छिद्र खुल जाते हैं, त्वचा में जो अनावश्यक तैलियपन होता है वह दूर हो जाता है। यदि टोनिंग के बाद मेकअप करना हो तो वह त्वचा पर देर तक स्थायी रूप से टिका रहता है।

टोनिंग द्वारा त्वचा में तरोताजगी बनी रहती है। स्कीन टॉनिक को लगाते समय सापफ सुध्री रूई का प्रयोग करना चाहिए। गुलाब–जल का प्रयोग करना उत्तम है। इसके अलावा सिरका, कुकुम्बर, औरेंज, लेमन आदि पफलों का प्रयोग भी कर सकते हैं।

सुगंध के लिए रोजमेरी, मिंट, सौंपफ आदि का अर्क प्रयोग कर सकते हैं।

टोनिंग द्वारा त्वचा मोश्चराइजींग विध्ि के लिए तैयार हो जाती है।

मोश्चराइजींग–

सभी प्रकार की त्वचा को मोश्चराइजींग की जरूरत पड़ती है, यहाँ तक की तैलीय त्वचा को भी कभी–कभी मोश्चराइजींग की जरूरत पड़ती है।

ज्यादा शुष्क त्वचा को ज्यादा मोश्चराइजींग की जरूरत पड़ती है। इसे लगाने से पहले क्लिंजिंग और टोनिंग अवश्य कर लेनी चाहिए। मेकअप से पहले भी मोश्चराइजींग अवश्य कर लेनी चाहिए।

मोश्चराइजर त्वचा की कोशिकाओं में नमी भी बनाये रखता है तथा उन्हें समय से पहले नष्ट होने से भी बचाता है।

मोश्चराइजर त्वचा की बाहरी सुरक्षा कवच बनकर रक्षा करती है। यह जीवाणुओं से भी त्वचा की रक्षा करती है। शुष्क वायु मोश्चराइजर के त्वचा पर रहने पर उसकी भीतरी नमी को नहीं सोख पाती है।

ग्लिसरीन सभी मोश्चराइजर का आधर माना जाता है। ग्लिसरीन के अलावा मोश्चराइजरों में एल्कोहल भी होता है। एल्कोहल का स्वभाव सुखाने का होता है, लंबे समय तक इससे युक्त मोश्चराइजर का प्रयोग करना त्वचा के लिए नुकसानदायक होता है।

मोश्चराइजर को प्रत्येक वाशिंग के पश्चात् लगभग 20 मिनट के लिए लगातार रखना चाहिए। हल्के मोश्चराइजर दिन के समय के लिए बेहतर हैं तथा भारी एवं ज्यादा पोषक मोश्चराइजरों को प्रयोग रात में करना चाहिए। इस समय त्वचा की सोखने की क्षमता ज्यादा रहती है।

सनबर्न में अति उपयोगी है मोश्चराइजर–हम इस तथ्य को अस्वीकार नहीं कर सकते हैं कि सूर्य किरणों से हमारे शरीर में बनने वाला विटामिन–डी अस्थियों को मजबूती प्रदान करता है किंतु हमें इसकी भी जानकारी रहनी चाहिए की सूर्य किरणें त्वचा के लिए नुकसानदायक भी होती है। सूर्यकिरणों त्वचा पर उसी प्रकार की प्रतिक्रिया करती हैं जिस प्रकार की प्रतिक्रिया वृ(ावस्था त्वचा पर करती है।

सूर्यकिरणें त्वचा की नमी को पूर्णतः सोख लेती हैं तथा त्वचा को शुष्क, मोटी एवं झुर्रियाँ युक्त बना देती है। अतः मोश्चराइजर का उपयोग ध्ूप में निकलने से पहले अवश्य करना चाहिए। इसे लगाने से त्वचा पर एक सुरक्षित परत बन जाती है जो सूर्य की हानिकारक अल्ट्रावायलेट किरणों से त्वचा को होने वाली क्षति से बचाता है।

वाशिंग–

साबुन त्वचा के लिए हानिकारक है यह तथ्य अब गलत हो चुका है क्योंकि समय के साथ–साथ अब त्वचा की प्रकृति के अनुसार साबुनें बनने लगी हैं। अत्यध्कि क्षारीय साबुनें त्वचा को नुकसान पहुँचाया करती हैं जो कि त्वचा को शुष्क एवं झुलसा देती हैं।

तकनीकी अविष्कार के द्वारा अब नहाने के साबुनों में लेनोलिन तथा अन्य उपयोगी तैलों का मिश्रण मिलाया जाने लगा है जो त्वचा की सामान्य नमी तथा तैलियपन को नष्ट नहीं होने देती है।

त्वचा की गहराई से सपफाई करना अत्यावश्यक हैं क्योंकि त्वचा पर रोजाना जमने वाला प्रदूषणजन्य धूल, गंदगी, कार्बन तैल आदि त्वचा की सतह पर जमकर त्वचा की कौशिकाओं को क्षति पहुँचाता है।

स्क्रबिंग–

स्क्रबर मृदु एवं त्वचा को क्षति न पहुँचाने वाला होना चाहिए तथा जिसे रोजाना इस्तेमाल किया जा सके। स्क्रबर रक्त संचार को बढ़ाते है, रोमकूपों को सापफ करते है एवं त्वचा की बाहरी निर्जिव परत को निकाल कर ब्लैक हैड्स को निकालने में मदद करते हैं। ये त्वचा में काँति उत्पन्न करते हैं तथा नई त्वचा को उत्पन्न होने में भी मदद करते हैं। अपनी त्वचा की अनुरूपता के अनुसार इसे बनाकर साबुन या क्लिंजर की जगह रोजाना इस्तेमाल किया जा सकता है।

सामान्यतः सभी स्क्रबरों का आधर अनाज की भुसी तथा साथ में जड़ी बूटियों का मिश्रण होता है। सुगंध के लिए गुलाब, चमेली आदि की पंखुड़ियों का प्रयोग किया जाता है।

उबटन की तरह इन्हें भी गुलाबजल या जड़ी बूटियों के काढ़े के साथ लेप बनाकर चेहरे पर लगाया जाता है। इस लेप को त्वचा पर हल्के हाथों से गोलाई से धुमाते हुए लगायें। थोड़ी देर पश्चात् ठन्डे जल से होकर सापफ कर लें।

स्नान ;बाथिंगद्ध–

सुंदरता को बनाए रखने का सबसे सरल एवं आसान तरीका जिसे की रोजाना किया जा सकता हो वह स्नान है। विशेष प्रकार के स्नान को सप्ताह में एक बार किया जा सकता है, जिसके लिए कम से कम 30 मिनट का समय चाहिए होता है।

विशेष प्रकार के बाथ–

मिल्क बाथ, विनेगर बाथ, हनी बाथ, हर्बल बाथ आदि।

विशेष प्रकार के स्नान को करना बहुत ही आसान है। इसके लिए आप नहाने के पानी में दूध, शहद, सिरका, स्टार्च, औषध्यि जड़ी–बूटियों का क्वाथ, बादाम, जैतुन

या सूरजमुखी तैल में से किसी एक को मिलाकर उससे स्नान करके लाभ उठा सकते हैं।

किन्तु इस बात का ध्यान रखना आवश्यक है कि आपकी त्वचा किस प्रकृति की है और कौन सी सौंदर्य समस्या आपको है, उसी के अनुसार स्नान का प्रकार भी निर्धरित किया जाता है।

स्टीमिंग ;वाष्प लेनाद्ध–

स्टीमिंग सभी प्रकार की त्वचा को स्वच्छ रखने के लिए पफायदेमंद है।

यह त्वचा की उफपरी सतह की गंदगी, मरी हुई एवं निष्क्रिय कोशिकाओं को हटाता हैं, रक्तसंचार को बढ़ाता हैं तथा बंद हुए रोमकूपों को भी खोलता है।

तैलिए त्वचा के लिए इसका उपयोग रोजाना भी किया जा सकता है किन्तु शुष्क त्वचा होने पर स्टीम का प्रयोग दो सप्ताह में एक बार ही करना चाहिए। स्टीम त्वचा की गहराई से सपफाई करने की सबसे पुरानी एवं प्रचलित विध्कि है।

स्टींमिग की विधि–

सर्वप्रथम सादे पानी या जड़ी–बूटियों के मिश्रण को पानी में उबालिए। जब वाष्प निकलने लगे तब उस बर्तन के उफपर सिर को थोड़ा सा आगे की ओर झुकाएं जिससे वाष्प चेहरे पर टकराने लगे। वाष्प इध्र–उध्र न पफैले और केवल चेहरे पर ही टकराए इसके लिए सिर के उफपर तौलिया आदि भी रख सकते हैं। वाष्प में सुगंध् पैदा करने के लए लेवेंडर, रोजमेरी व थाइम को जल में मिला सकते हैं। वाष्प को 15–20 मिनट लें।

स्टीमिंग के लाभ –

(1) स्टीमिंग बन्द हुए त्वचा के छिद्रों को खोलती है, ब्लैकहेड्स को निकालने में मदद करती हैं।

(2) तैलिय त्वचा में हो रहे मुंहासों को बढ़ने से रोकती है।

(3) हर्बल स्टीम की सुगन्ध, उफष्णता एवं नमी मांसपेशियों के तनाव को कम करने वाली है, मानसिक सुख प्रदान कर आत्मियता उत्पन्न करती है।

(4) स्टीम की नमी त्वचा की बाहरी निर्जिव एवं निष्क्रिय सतह को मुलायम कर निकालने में मदद करती हैं।

(5) स्टीम की उष्मा चेहरे में रक्तसंचार को बढ़ाकर रोमछिद्रों और ग्रन्थियों को सक्रिय कर भीतरी सतह से दूषित पदार्थों एवं मलों को सतह में ले आती हैं।

(6) स्टीम क्लिंजिंग से होने वाले लाभों को भी पहुँचाती हैं।

(7) चेहरे में मसाज के बाद स्टीम लेने से वात दोष को भी कम करती हैं।

सावधनियाँ–

(1) स्टीम लेते समय चेहरा बर्तन से न ही ज्यादा समीप हो और न ही ज्यादा दूर हो।

(2) ज्यादा देर तक भी स्टीम न लें क्योंकि यह त्वचा को झुलसा देती हैं।

(3) स्टीम लेने की संख्या इस बात पर निर्भर करती हैं कि त्वचा की प्रकृति कैसी हैं। यदि शुष्क त्वचा हैं तो दो सप्ताह में 1 बार ही स्टीम लें। तैलीय या सामान्य त्वचा के लिए सप्ताह में एक बार ही स्टीम लें।

यद्यपि स्टीम स्वभाव से आद्र होती है किन्तु ज्यादा लेने से यह त्वचा में शुष्कता उत्पन्न करता है जिससे त्वचा खुरदरी व निर्जिव लगने लगती है।

पफैसपैक–

पफैसपैक पफेसमास्क की तुलना में ज्यादा मुलायम एवं बारीक पीसा हुआ होता हैं। कार्य में भी पफेसमास्क की तरह रक्तसंचार को सुधरते हैं एवं स्वच्छता प्रदान करते हैं।

क्योंकि पफेसपैक ज्यादा मुलायम होता हैं इसलिए इसे पैफसमास्क की तुलना में चेहरे पर ज्यादा देर तक लगाये रखा जा सकता हैं।

पेफसपैक विभिन्न प्रकार की सब्जियों एवं पफलों से बनाए जा सकते हैं। पफेसपैक लगाने के लिए पफल या सब्जी को हाथों से कुचलकर बारीक पेस्ट बनायें पिफर इसमें त्वचा के अनुसार जौ का आटा, मुलतानी मिट्टी, अगर–अगर आदि को भी मिलायें।

सामान्य त्वचा के लिए – केला, अंगूर, आडू आदि।

शुष्क त्वचा के लिए – सेब, गाजर, नाशपति, तरबूज आदि।

तौलिय त्वचा के लिए – बंदगोभी, खीरा, संतरा, स्ट्रॉबेरी, टमाटर आदि।

पफैसपैक एवं पफेसमास्क दोनों को ही ठन्डे पानी से धेना चाहिए।

मास्क–

मास्क सौंदर्य की सबसे पुरानी विधि हैं।

मास्क कई प्रकार के माने गऐ हैं। मुख्यतः कार्यानुसार ये तीन प्रकार के होते हैं–

(1) त्वचा की आन्तरिक दूषित पदार्थों को निकालने वालें, ब्लैकहैड्स एवं मुहांसों को रोकने एवं हटाने वाले।

(2) त्वचा को पोषकतत्व प्रदान करने वालें, रोमकूपों का शुि(करण, रंग को निखारकर एवं नमी प्रदान कर त्वचा को नवीनीकरण प्रदान करने वाले।

(3) त्वचा की आन्तरिक परत को सक्रिय कर नई स्वस्थ त्वचा की उत्पत्ति करना।

मिट्टी एक उत्तम मास्क का काम करती है। यह त्वचा से दूषित द्रव्यों को चुम्बक की भाँति खींच कर निकाल लेती है एवं भीतरी त्वचा को सक्रिय कर देती हैं। मिट्टी साथ ही कई प्रकार के मिनरल्स की भी स्त्राोत है।

मास्क को अध्कि गुणकारी बनाने के लिए त्वचा की प्रकृति के अनुसार उसमें जड़ी बूटियाँ एवं सुगंध्ति तैल भी मिलाये जाते हैं। सुगंध को उत्पन्न करने के लिए सुगंध्ति द्रव्य की कुछ ही बूंदों की आवश्यकता पड़ती है।

मास्क को 10–20 मिनट तक लगाये रखना चाहिए।

पिफर इसके बाद धे लेना चाहिए।

मास्क को चेहरे पर लगाते समय एक बात का ध्यान रखना चाहिए की चेहरा तनावरहित हो।

उपयोग अनुसार निम्न प्रकार के मास्क होते हैं– मिल्क मास्क, क्लिंजिंग मास्क, बटरमिल्क मास्क आदि।

नेत्रा तर्पण –

नेत्रा तर्पण का तात्पर्य नेत्राों को औषध्यि तेल द्वारा धेना कहलाता है। नेत्रा की सौंदर्य समस्याओं के लिए नेत्रा उत्तम सौंदर्य का समाधन है।

नेत्रा बस्ति हेतू निम्न द्रव्यों की आवश्यकता पड़ती है।

(1) आध कप घी

(2) गुंदा हुआ गेहूँ का आटा।

(3) एक चम्मच

(4) 2 कटोरियाँ–एक आटे के लिए तथा दूसरी कटोरी में प्रयुक्त घी को एकत्रा करने के लिए।

विधि –

(1) नेत्रा बस्ती की प्रक्रिया में सर्वप्रथम रोगी को एक समतल पलंग पर लैटाये। उसको प्रक्रिया की पूरी जानकारी दे। यदि कोई चश्मा पहनता है तो उतारने को कहें। उसे शांत एवं निश्चित होने को कहें।

(2) सर्वप्रथम हाथों पर हल्का सा तैल लगाये, पिफर चेहरे पर हल्के हाथों से मसाज करें। आंखों के किनारे ज्यादा तैलिया मसाज न करे क्योंकि ऐसा करने से आटा चिपकता नहीं है।

(3) गुंदे हुए आटे से दाहिनी आँख के किनारे चारों तरपफ दो अंगुल ऊँची दीवार बनाये जिससे की तैल नेत्रा से बाहर न निकल पाये।

(4) पिफर हल्के से गुनगुने घी को निकाले। आध–चम्मच घी की मात्राा को नेत्रा के बाहरी किनारे में डाले। यदि व्यक्ति को यह तापमान सुखदायी लगता है तो 4–5 चम्मच घी और डाले जिससे की आँखे एवं पलकें पूर्णतः घी में डूब जाये। दूसरी आँख को किसी रूमाल से ढक भी सकते है जिससे की एकग्रचित रह सके।

(5) व्यक्ति अपनी दाहिनी आंख को बंद या खोलकर भी रख सकता है। घी शुरूआत में आंख पर जलन कर सकता है। किन्तु अश्रुस्त्राव होते ही यह जलन भी खत्म हो जाती है।

इसके पश्चात आंख को हर दिशा में हल्के–हल्के घुमाना चाहिए। आवश्यकता अनुसार आंख को बद या खोल भी सकते हैं। कम से कम घी को 20 मिनट तक रखे।

(6) इसके पश्चात घी को आटे में किनारे से छोटा सा छेद करके कटोरी में एकत्रिात कर ले घी निकालते समय सिर को उसी तरह झुका ले आंख को धेने के लिए गुलाब जल प्रयोग करे ताकि आंख से घी पूर्ण रूप से सापफ हो जाय।

इकाई – 2

योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा का सौन्दर्य में योगदान

योग की आवश्यकता– योग का शाब्दिक अर्थ है– मिलना या जुड़ना। अतः 'योग' शब्द को बहुत ही सकारात्मक रूप में देखा जा सकता है। हमारी इस सुन्दर सृष्टि की रचना ही योग के द्वारा हुई है अर्थात् पुरुष और प्रकृत्ति के मिलने से। इस बात से पुष्टि होती है कि कोई भी निर्माणकारी कार्य बिना योग के संभव नहीं है। निर्माण के बिना इस सृष्टि का सुचारू रूप से संचालन और विकास संभव नहीं है। कारण जो भी हो, पौराणिाक या आधुनिक योग ही जीवन को व्यवस्थित कर सकता है। इसलिए ऐसा भी कहा जा सकता है कि 'जीवन जीने की कला का नाम ही योग है।' इस नाते हमारे जीवन में योग की महत्ता और भी बढ़ जाती है। योग हमारे जीवन का आवश्यक अंग है। यह वह विज्ञान है जो जीव, चेतना और पदार्थ तीनों को साथ लेकर चलता है।

मानव जीवन में योग का महत्व– यह वह विज्ञान है जिसके माध्यम से शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक, सामाजिक व भावनात्मक स्तर पर सच्चे स्वरूप को प्राप्त किया जा सकता है। यह वह कामधेनु या कल्पवृक्ष है जिसके द्वारा मनुष्य सब कुछ प्राप्त कर सकता है तथा जीवन में पूर्ण सफलता प्राप्त कर सकता है।

योगासनों के माध्यम से शारीरिक शाक्तियों का विकास होता है। शारीर को ह्रष्ट–पुष्ट बनाने में, उसके अंग–प्रत्यंगो की कार्यक्षमता में वृद्धि करने तथा उसे नीरोग बनाए रखकर ओजस्वी एवं कान्तिमय बनाने में योग साधना का कोई सानी नहीं है। शरीर में विभिन्न द्रव्यों का निर्माण करने वाली ग्रान्थियों को ठीक प्रकार नियन्त्रित कर उन्हें पर्याप्त रूप से सजग एवं क्रियाशील बनाए रखने में योग द्वारा पूर्ण सहायता मिलती है।

शरीर के आंतरिक अवयवों, रक्त नलिकाओं–कोशिकाओं की सफाई से लेकर श्वसन तथा पाचन तन्त्र के अंगों की आन्तरिक सफाई तथा विजातीय द्रव्यों की बाहर निकालने में योग से बहुत सहायता मिलती है।

योग के विभिन्न अंगों जैसे प्राणायाम आदि तथा अनेक बंध, क्रियाएँ, मुद्राएँ आदि भी शरीरिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। इससे शरीर में अतीव स्फूर्ति आ जाती है। जिसके परिणामस्वरूप बहुमुखी विकास का द्वार खुलने लगता है।

योग साधना के द्वारा शरीर की रोगनाशक और कीटाणुओं से लड़ने की क्षमता में वृद्धि होती है। संसार को भंयकर रोगों से मुक्त करना अथवा उनसे बचे रहने का मार्गदर्शन करना योग विद्या की महान देन है।

योग के सम्यक् अभ्यास से तो रोग और जरा–जन्य क्लेश का परिहार होता ही है, साधक को इच्छा मृत्यु की शक्ति भी प्राप्त होती है।

राजयोग सब प्रकार के योग साधनाओं का राजा है। वह सर्वश्रेष्ठ तथा सर्वोच्च है। राजयोग को अस्टांग योग भी कहा जाता है। पातंजल योग सूत्र में राजयोग के 8 अंग हैं जो निम्न हैं–

यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि राजयोग के 8 अंग है। इनमें मुख्यतः आसन तथा प्राणायाम का प्रयोग सर्वाधिक होता है तथा इसका शरीर पर काफी प्रभाव पड़ता है।

आसन– आसन का अर्थ होता है – स्थिरता पूर्वक बैठना

दीर्घकाल तक आसनों का अभ्यास करने से शारीरिक स्तर पर होने वाले द्वंद और उससे भी अधिक मानसिक स्तर पर होने वाले द्वंद नष्ट हो जाते हैं।

(1) वज्रासन– इसको करने से पाचन संस्थान तथा प्रजनन संस्थान पर प्रभाव पड़ता है। पाचन की दर को तीव्र करता है। इसको खाना खाने के बाद किया जाना चाहिए।

(2) सूर्य नमस्कार– सूर्य नमस्कार से सम्पूर्ण शरीर को आरोग्य, शक्ति एवं ऊर्जा की प्राप्ति होती है। इससे शरीर के सभी अंग–प्रत्यंगों में क्रियाशीलता आती है तथा शरीर की समस्त आन्तरिक ग्रान्थियों के अन्तःस्त्राव की प्रक्रिया का नियमन होता है।

- इससे मानसिक शान्ति एवं बल, ओज तथा तेज की वृद्धि होती है।
- सूर्य नमस्कार सम्पूर्ण शरीर को पूर्ण आरोग्य प्रदान करता है।
- सम्पूर्ण शरीर में रक्त संचार को सुचारू रूप से सम्पन्न करता है, इसलिए रक्त की अशुद्धि को भी दूर कर चर्मरोगों का नाश करता है।

शीर्षासन– इससे शुद्ध रक्त मास्तिष्क को मिलता है, जिससे आँख, कान, नाक आदि को आरोग्य मिलता है।

मुख्मंडल पर ओज एवं तेज की वृद्धि करता है।

असमय बालों का झड़ना एवं सफेद होना, इन दोनों ही व्याधियों को दूर करता है।

गर्भासन– जठराग्नि को बढ़ाता है। सम्पूर्ण पाचन तन्त्र के लिए उपयोगी आसन है।

मयूर आसन– तित्ली, यकृत, गुर्दे, अग्न्याशय एवं आमाशय सभी लाभान्वित होते हैं। मुख पर कान्ति आती है। जठराग्नि को प्रदीप्त करता है।

पादांगुष्ठासन– ब्रह्मचर्य के लिए लाभकारी है। दीर्घकाल तक अभ्यास करने पर कुण्डलिनी जाग्रत होती है और वीर्य उर्ध्वगामी होता है। शरीर में बल, बुद्धि, ओज एवं तेज की वृद्धि होती है।

वृक्षासन– शरीर में बल, कान्ति एवं वीर्य की वृद्धि करता है।

प्राणायाम

प्राणायाम दो शब्दों से मिलकर बना है – प्राण + आयाम। प्राण = जीवनी शक्ति। आयाम – विस्तार या धारण करना, नियंत्रण करना या रोकना, अर्थात प्राणों का विस्तार करना ही प्राणायाम है।

जिस प्रकार स्वास्थ्य की वृद्धि के लिए व्यायाम का विशेष महत्व है, उसी प्रकार प्राण शक्ति की वृद्धि के लिए प्राणायाम आवश्यक है। प्राणों के व्यायाम को ही प्राणायाम कहते हैं। जिस प्रकार सोने को भटठ्ी में डालने पर उसका वास्तविक स्वरूप प्रकट हो जाता है, उसी प्रकार मनुष्य के अंदर विभिन्न दुर्गुणों से मुक्त कर अपने आत्मपुंज को प्रकाशित करना प्राणायाम है।

प्राणायाम एक कला है जिसमें तीन क्रियाएँ हैं– पूरक, रेचक, कुंभक। पूरक यानी श्वास लेना, रेचक यानी श्वास छोड़ना तथा कुंभक यानी श्वास को भीतर रोकर रखना।

प्राणायाम से लाभ– प्राणायामक करने से शरीर के विभिन्न अंगो पर प्रभाव पड़ता है। प्राणायाम स्वास्थ्य संवर्द्धन हेतु अति उत्तम माना जाता है। प्राणायाम फेफड़ों को मजबूत बनाता है। श्वास लेते समय जब फेफड़ों का प्रसार होता है तब गुर्दे, उदर, यकृत, तिल्ली, आंतों तथा साथ ही साथ धड की सतह पर रक्त पोषक पदार्थों का समुचित परिसंचरण करता है। प्रतिदिन प्राणायाम करने से शरीर कांतियुक्त हो जाता है। शरीर के अंदर के प्रत्येक अवयव की प्राणायाम के माध्यम से अच्छी तरह से मालिश हो जाती है। शरीर को अधिक मात्रा में ऑक्सीजन प्राप्त होने लगती है और शिरा एवं धमनियों में जो अवरोध उत्पन्न होता है वह हट जाता है तथा शरीर में रक्त का संचार अधिक सुचारू रूप से होने लगता है।

सीत्कारी प्राणायाम– (1) शरीर तेजस्वी बनता है।

(2) शरीर गौरवर्ण का हो जाता है।

भस्त्रिका प्राणायाम– (1) यह कुंडलिनी जागरण में सहायक है।

(2) वात–कफ को दूर करता है तथा जठराग्नि को प्रदीप्त करता है।

भ्रामरी प्राणायाम– (1) क्रोध, चिंता एवं अनिद्रा का निवारण करता है।

(2) आवाज को मधुर एवं मजबूत बनाता हैं

(3) गले के रोगों का निवारण करता है।

षट्कर्म

शरीर की शुद्धि एवं राजयोग में प्रवेशार्थ अपने शिष्यों को ऋषियों ने षट्कर्म की शिक्षा का उपदेश किया। ये क्रियाएँ मानव शरीर का कायाकल्प करके उसे रोगमुक्त, दीर्घायु, स्वस्थ, पुस्ट एवं कान्तिमय बनाती हैं।

षट्कर्म की ये क्रियाएँ स्थूल शरीर को शुद्ध करती हुई सूक्ष्म शरीर के शुद्धिकरण में भी अत्यन्त सहायक हैं। इन क्रियाओं के अभ्यास से बीस प्रकार के कफरोग, सभी वातरोग, पित्तरोग, कुष्ठरोग, उदररोग, फुफ्फुस विकार, हृदय एवं वृक्क की विकृतियाँ दर होती हैं।

योग साधना के ग्रन्थों में वार्णित षट्कर्म निम्नांकित है– धौति, बस्ति, नेति नौलि, त्राटक और कपालभांति। इनमें प्रथम धौति अन्तः धौति, दन्तधौति, हृद्धौति और मूलशोधन भेद से चार प्रकार की है। नियमित रीति से धौति के अभ्यास द्वारा योगीजन अपने शरीर का शोधन करके उसे निर्मल बनाते हैं। धौति की इन चारों क्रिया द्वारा उदर के भिन्न–भिन्न भागों की शुद्धि होती है यथा वातसार धौति, जिसमें ओस्ठ को कौए की चोंच की भांति बनाकर धीरे–धीरे वायु को उदर में भर कर उसका परिचालन करके उसे निकाल दिया जाता है। यह शरीर को निर्मल करके समस्त रोगों को दूर करता है, अग्नि को भी प्रदीप्त करता है। वारिसर धौति में योगी धीरे–धीरे से बहुत सा जल पीकर उदर का संचालन करता है और अधोमार्ग से उस जल को निकाल देता

है। इसके द्वारा आंतों की पूरी धुलाई हो जाती है और शरीर का समस्त मल निकल जाता है। फलतः शरीर देव देह की भांति कान्तिमान हो जाता है। अग्निसार धौति में श्वास को बाहर निकाल कर पेट को अन्दर पीछे की ओर इतना तानते हैं कि नाभि ग्रान्थि मेरूपृष्ठ में लग जाये। इस क्रिया को सामान्यतः सौ बार अवश्य किया जाता है। इसके अभ्यास से उदर के सभी दोष दूर हो जाते हैं और जठराग्नि प्रदीप्त हो जाती है। इसी प्रकार बहिष्कृत अन्तः द्यौति में काकी मुद्रा के द्वारा उदर में वायु भरकर आधे प्रहर उदर में ही स्थिर रखकर पुनः उदर चालन करके वायु को गुदा मार्ग से निकाल दिया जाता है।

षट्शोधन क्रियाएँ

नेति क्रिया– यह षट्कर्म के अंतर्गत शुद्धिकरण की तीसरी प्रक्रिया है जिसका मुख्य उद्देश्य शीर्ष प्रदेश, मास्तिष्क के क्षेत्र की सफाई करना है। इस क्रिया से दृष्टि से संबंधित नाड़ियों एवं अन्य आंतरिक नाडियों का भी शोधन होता है। नासिका के भीतरी क्षेत्र की भी शुद्धि होती है। हठयोग में दो प्रकार की नेति की चर्चा है। जिसमें पहला जल नेति जो कि बहुत ही प्रचलित अभ्यास है तथा दूसरा सूत्र नेति। सूत्र नेति के समान ही रबड़ नेति का भी अभ्यास किया जाता है।

जलनेति– (1) आँख, कान से सम्बन्धित कष्ट दूर हो जाते है। इसका आधुनिक नाम E.N.T. Care है। अर्थात् नाक, कान, गले से संबद्ध क्रिया।

(2) यह क्रिया आँखों की स्वच्छता तथा दृष्टि को सुरक्षित रखने में सहायक होती है। एलर्जी पर भी इसका अत्यन्त सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

(3) इससे अनिद्रा, थकावट आदि भी दूर होता है।

वरिसार द्यौति– इस क्रिया को कायाकल्प भी कहते हैं। शरीर के सभी विषाक्त तत्व निकाल दिए जाते हैं, जिससे नवीन शुद्ध तत्व निर्मित होता है। इसे शंख प्रक्षालन भी कहते हैं।

यह क्रिया शरीर को निर्मल बनाती है। यह शुद्धिकरण की श्रेष्ठ क्रिया है। इससे शरीर को शुद्ध किया जाता है। विकारों को दूर किया जाता है। व्यक्ति देवता के समान दिव्य, कांतिमय, ओजस्वी और हल्का शरीर प्राप्त करता है।

अग्निसार द्यौति– इस क्रिया द्वारा जठराग्नि को तीव्र करके पाचन शक्ति बढ़ाई जाती है। द्यौति का अर्थ शरीर की अशुद्वियों को धोकर बाहर निकालने की क्रिया है।

प्राकृतिक चिकित्सा

हमारे देह में सर्वदा नाना प्रकार के विष उत्पन्न हो रहे हैं। हम स्वस्थ रहने के लिए प्रतिदिन दवा नहीं पीते। प्रकृति सर्वदा शरीर की गन्दगी, चर्म, मूत्रयंत्र तथा आंत इत्यादि के रास्ते से शरीर में से निकाल कर हमें स्वस्थ रखती है। रोग होने पर भी हम शोधन अंगों से रोग–विकार शरीर में से बाहर निकालकर शरीर को स्वस्थ रख सकते हैं।

प्राकृतिक चिकित्सकों का मानना है कि अच्छा आहार वह है, जो अपने मौलिक रूप से बिना किसी परिवर्तन के स्वादिष्ट लगता है और जिसे खाने के लिए हमारा मन ललचाता है। जो बहुत सरलता से कम समय में पच जाता है और हमें अधिकाधिक शक्ति देता है।

मालिश– मोटे तौर पर मालिश 7 प्रकार से की जाती है– (1) तैल द्वारा मालिश (2) सूखी मालिश (3) पांव से मालिश (4) ठण्डी मालिश (5) गर्म ठण्डी मालिश (6) पाउडर से मालिश और (7) बिजली से मालिश।

तैल मालिश

यूं मालिश के कई ढंग है पर वास्तविक मालिश तो तैल से ही होती है। तैल लगाने से शरीर की त्वचा पर इच्छानुसार हाथ चलाने और मसलने से सुविधा होती है और तैल सीधा शरीर में पहुंच कर लोच, मुलामियत व स्निगधता पहुंचाता है। तैल

खाने में उतना लाभकारी नहीं होता है जितना शरीर पर लगा कर मालिश करने पर होता है। भावप्रकाश निघण्टु में लिखा है–

त्वच्यं केश्यं मेध्यं च चक्षुष्यमभ्यंगे भाजनेऽन्यथा।

अर्थात् मालिश करने से तैल त्वचा, केश और नेत्रों के लिए हितकारी और खाने से त्वचा, केश और नेत्रों के लिए हानिकारक होता है। इसीलिए तैल में तले हुए पदार्थ हानिकारक हो जाती है। तैल मालिश से त्वचा में चिकनापन और मांसपेशियों में बल बढ़ता है, शरीर में लोच पैदा हाता है, खुश्की दूर होती है और स्फूर्ति पैदा हाती है।

मालिश में त्वचा पर हथेली से घर्षड करना यानी मसलना, थपथपाना, हलके मुक्के मारना, मरोड़ना, हलके से झकझोरना या हिलाना आदि शामिल है। शीतकाल में सरसौं का तैल भी प्रयोग किया जा सकता है। तैल की शीशी में भर कर रोजाना दिनभर धूप में रखने से उसमें सूर्यकिरणों का प्रभाव आ जाता है। इससे तैल के गुण और भी बढ़ जाते हैं। यदि लगातार 40 दिन तक धूप में रखा जाय और रात होने से पहले उठा लिया जाय ताकि चन्द्रकिरण उस पर न पड़ने पाएं तो यह उत्तम शक्तियुक्त तैल बन जाता है। विभिन्न सौंदर्य समस्याओं के लिए अलग–अलग तरह के तैल आदि उपयोगी रहते हैं इनकी चर्चा आगे की जाएगी।

मालिश करते हुए यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि पैरों पर मालिश करते समय हाथ नीचे से ऊपर को हृदय की तरफ चलाएं। कन्धे व गले से नीचे की तरफ हाथ चलाएं और कमर कूल्हे से ऊपर की तरफ हाथ चलाएं और कमर कूल्हे से ऊपर की तरफ यानी दिल को केन्द्र मान कर दिल की तरफ हाथ चलाएं। हाथ चलाने का ढंग ऐसा हो कि त्वचा के रोम (बाल) न टूटें। हाथ अंग के शुरू से लेकर अन्त तक लम्बा चलाएं एक ही जगह मसलना ठीक नहीं। यदि आप हाथ की मालिश करें तो नीचे टखने से ऊपर टखने से लेकर जांघ के अन्त तक हाथ ले जाएं। हाथ को झटके से नहीं बल्कि लयबद्ध तरीके से हलका दबाव देते हुए या ताल देते हुए चलाएं। मांस पेशियों को मसलने के लिए अंगूठे व अंगुलियों से पेशी को चुटकी से पकड़ें छोड़ें फिर

आगे पकड़ें छोड़ें ऐसे करते हुए हृदय की तरफ बढ़ें, नीचे से ऊपर की तरफ चलाते जाएं। साथ ही यह भी खयाल रखें कि ऐसी मालिश मांसपेशी की बनावट के अनुसार ही करें। ज्यादा जोर से न करें ताकि पीड़ा न हो।

यूं तो मालिश सुबह या शाम को, किसी भी समय की जा सकती है पर यह खयाल रखना चाहिए कि उस वक्त पेट खाली हो। सुबह स्नान से पहले मालिश करके बदन को ठण्डा करके स्नान करना चाहिए और तौलिये से खूब रगड़ कर बदन पोंछना चाहिए। रात को सोने से पहले मालिश करानी हो तो पाउडर लगा कर कर सकते हैं। यदि तैल लगा कर मालिश करें तो स्पंज करके सो सकते है ताकि कपड़े खराब न हों। मालिश के बाद स्नान करना लाभदायक होता है। यदि ठण्डे पानी से स्नान करना लाभदायक होता है। यदि ठण्डे पानी से स्नान न कर सकें तो गुनगुने गर्म पानी से स्नान कर सकते हैं पर गर्म पानी से स्नान बन्द कमरे में ही करना चाहिए और बाद में भी ठण्डी हवा से बचना चाहिए। ठण्डे जल से स्नान करने वाले के लिए यह जरूरी नहीं। स्नान के बाद सूखे तौलिये से खूब रगड़ कर बदन को पोंछना जरूरी है।

मालिश के प्रमुख लाभः

- मालिश करने से त्वचा स्वस्थ सुन्दर, बलवान, झुर्री रहित, मुलायम और चिकनी बनी रहती है। रक्त संचार ठीक से होता रहता है जिससे शरीर बलवान, चुस्त–दुरुस्त और फुर्तीला बना रहता है तथा पसीने के जरिये शरीर के विकार निकल जाते हैं।

- पचन संस्थान के अंग–प्रत्यंगों को, यथा यकृत आंतों, पक्वाशय आदि को बल मिलता है जिससे पाचन संस्थान को शक्ति व उत्तेजना मिलती है और पाचन क्रिया से सुधार होता है इससे पाचन शक्ति बढ़ती है और मेल ठीक से विसर्जित होता है।

- फेफड़ों, गुर्दों और हृदय को बल मिलता है जिससे वे शरीर के विकारों को उचित ढंग से शरीर से बाहर निकालने में समर्थ बने रहते हैं और शरीर को

स्वस्थ व बलवान बनाए रखते हैं। शरीर मोटा हो तो मोटापा कम होता है और दुबला हो तो पुष्ट व सुडौल होता है।

- शरीर के सभी अवयवों को तैल से स्निग्ध्ता (चिकनाई) प्राप्त होती है अतः वे लचीले और मजबूत बने रहते हैं जिससे पूरा शरीर बलवान बना रहता है और शरीर के सभी अंग–प्रत्यंगों का विकास भली भांति और आवश्यकता के अनुकूल होता रहता है।

- त्वचा द्वारा शरीर को सीधी खुराक मिलने से शरीर को पोषण पर्याप्त मात्रा में और शीघ्रता से होता है। जो व्यायाम और योगासनों को अभ्यास नहीं कर पाते वे भी मालिश करके शरीर को बलवान और चुस्त–दुरूरत बनाए रख सकते हैं अतः मालिश करना लाभप्रद है।

जल व मिट्टी का प्रयोग– जंगलों के सरोवरों के जल को पित्त विकारों को दूर करने वाला, अग्निवर्धक तथा विविध रोगों का नाशक बताया है। सामान्य जल अग्नि को प्रदीप्त करने वाला तृप्तिदायक, अरूचि, तृस्णा, दाह तथा वात–पित्त और श्लेस्मा की वृद्धि से उत्पन्न होने वाले रोगों को दूर करने वाला होता है। मिट्टी की पट्टी का चर्म रोगों में अत्यधिक प्रयोग होता है।

सौन्दर्यवर्धक द्रव्य– सौंन्दर्य में वर्ण का महत्व सर्वाधिक है। सुवर्ण के प्रति सभी का आकर्षण और उसकी महत्त्वता उसके सुवर्ण होने अर्थात् सुन्दर वर्णवाला होने से है। अपने वर्ण को आकर्षक बनाने और उसे स्थिर बनाये रखने के लिए प्राचीन काल में वैदिक ऋषि चन्दन, तुंग, पद्यक, उशीर, मुलेठी, मंजीर, अनन्तमूल, पयस्या, सिता, लता इन वर्ण प्रसादक दस औषधियों का प्रयोग करते कराते थे।

भाप स्नान– हमारे शरीर की त्वचा जो हमारे शरीर के भीतरी अंगों को ढकने में कपड़े का काम करती है भाप स्नान के माध्यम से स्वच्छ, स्वस्थ और सतेज बनाती है। भाप स्नान के माध्यम से हम शरीर के आंतरिक अंगों में उपस्थित विजातीय द्रव्य को रोम कूप तथा शरीर के विभिन्न मल निस्कासन मार्गो से बाहर निकालते हैं।

जलचिकित्सा के अंतः प्रयोग – एनिमा

(1) इसको जलवस्ति या आभयत्तर स्नान भी कहते हैं।

(2) आंत की सफाई का यह नतीजा होता है कि उससे शरीर निर्मल रोग रहित और सुन्दर दिखने लगता है।

(3) शरीर का रक्त भी साफ हो जाता है।

प्रातः काल टहलने से लाभ– प्रातः काल टहलने से वायु के पूर्ण लाभ प्राप्त होते हैं। अतः प्राणायाम के अतिरिक्त प्रातः काल के टहलने से स्वस्थ व्यक्ति को व रोगी को आरोग्य लाभ की प्राप्ति होती है, मुख कान्तियुक्त हो जाता है।

सूर्य किरण चिकित्सा– सूर्य कि किरणों स्वास्थ्य के लिए बड़ी लाभकारी होती है। रोगों के रोगाषुओं को समूल नष्ट कर देती है।

मुलतानी मिट्टी– इसे स्त्रियाँ उबटन की तरह शरीर पर मलती हैं जिससे उनकी त्वचा सुन्दर और कान्तिमय हो जाती है। यह शरीर की गर्मी शान्त करने में उपयोगी है। त्वचा के रोगों में बहुत प्रभावकारी होती है। इससे त्वचा में चमक आती है तथा त्वचा स्वच्छ बनती है।

संशोधन

आयुर्विज्ञान के प्राचीन संस्कृत ग्रन्थों में स्वास्थ्य की रक्षा, रोगों की निवृत्ति, बल, वीर्य एवं आप्रष्य की वृद्धि के लिए वर्ष में न्यूनातिन्यून एक बार बसन्त अथवा शरद् ऋतु में पंचकर्म द्वारा शरीर का संशोधन करने का परमार्श दिया गया है। इन आचार्यों की मान्यता है कि संशोधन द्वारा कोष्ठ की शुद्धि होने से जठराग्नि प्रदीप्त हो जाती है। सभी रोग शान्त हो जाते हैं। मनुष्य अपनी प्रकृति में लौट आता है। इन्द्रियां बल, बुद्धि और वर्ण निर्मल हो जाते हैं। बल, पुष्टि, अपत्य, का लाभ और संभोग शक्ति बढ़ जाती है। उसके शरीर में वृद्धावस्था का पदार्पण सहज ही नहीं हो पाता है और वह रोग रहित होकर चिरकाल तक जीवित रहता है। इसलिए यशोचित संशोधन अवश्य ही

करना और कराना चाहिए। वे यह भी स्वीकार करते हैं कि जिस प्रकार मलिन वस्त्र पर स्वच्छ किये बिना रंग नहीं चढ़ता, उसी प्रकार शरीर का शोधन किये बिना रसायन बिना रंग नहीं चढ़ता, उसी प्रकार शरीर का शोधन किये बिना रसायन का प्रयोग नहीं कराना चाहिए अन्यथा उसका कोई लाभ नहीं मिलता है।

प्राकृतिक चिकित्सा के सिद्धान्त

प्राकृतिक चिकित्सा रेागों को निर्मूल करने की स्वाभाविक और हर तरह से लाभदायक प्रणाली है। प्राकृतिक चिकित्सा मानव जीवन का सही दिशा संकेत करती है। अधिक से अधिक प्रकृत्ति से संबंध बनाकर रखने से स्वस्थ व निरोगी जीवनयापन व्यक्ति द्वारा किया जा सकता है।

मानव शरीर में स्वाभाविक रूप से एक ऐसी प्रवृत्ति पाई जाती है जो सदैव बाहरी और भीतरी हानिकारक प्रभावों से उसकी रक्षा, करती रहती है। शरीर विज्ञान के ज्ञाता जिसको 'नियमितता रखने वाला संयत्र' कहते हैं और साधारण लोग जिसे जीवन शक्ति के नाम से पुकारते हैं, वही शक्ति सब प्रकार के रोगों के कारणो को स्वयमेव दूर करती रहती है। वह निरस्तर शरीर का निर्माण करती रहती है और जो कुछ टूट–फूट हो जाती है उसकी मरम्मत का भी ध्यान रखती है। साथ ही शरीर के भीतर जो अस्वाभाविक तत्व पैदा हो जाते है या बाहर से पहुँच जाते हैं उन्हे निकालने का भी प्रयत्न करती रहती है। इसमें तो कोई संदेह नहीं कि रोग मनुष्य के लिए एक अस्वाभाविक अवस्था है। ज बवह असावधानी से या गलती से प्रकृति विरूद्ध मार्ग पर चलने लगता है तो उसके शरीर में विजातीय द्रव्य की माला बढ़ने लगती है। जिसके फलस्वरू देह में तरह के विष उत्पन्न होने लगते हैं और वातावरण में पाए जाने वाले हानिकारक कीटाणुओं का भी उस पर आक्रमण होने लगता है। इससे शरीर का पोषण और सफाई करने वाले संयंत्र निर्बल पड़ने लगते हैं उनके कार्य में त्रुटि होने लगती है और मनुष्य रोगी हो जाता है। मनुष्य रोगी न बने, इसके लिए प्राकृतिक चिकित्सा काफी लाभकारी होती है।

इकाई – 3

आयुर्वेदीय आहार का सौन्दर्य में महत्त्व

आयुर्वेद– आयुः अस्मिन् विद्यते, अनेन वा आयुः विन्दति इति आयुर्वेदः। आयुर्वेद के सम्बन्ध में महर्षि सुश्रुत ने कहा है, आयु इसके द्वारा जानी जाती है या आयु का इसमें विचार किया जाता है, या आयु इसके द्वारा प्राप्त की जाती है, इसलिए यह आयुर्वेद है।

आयुर्वेद एक चिकित्सा विज्ञान है। स्वस्थ के स्वास्थ्य का संरक्षण एवं रोगी के रोग का उन्मू लन इसका प्रयोजन है।

महर्षि अग्निवंश ने कहा है– **''प्रयोजनं चास्य स्वस्थस्य स्वास्थ्यरक्षणम् आतुरस्य विकारप्रशमनं च।''**

आयुर्वेदीय आहार– आयुर्वेद के अनुसार मनुष्य को मात्रापूर्वक भोजन करना चाहिए। आहार की मात्रा अग्नि के बल की अपेक्षा करने वाली होती है। आहार की जो मात्रा भोजन करने वाले की प्रकृति में बाधा न पहुँचाते हुए यथासमय पच जाय वही उस व्यक्ति के लिए प्रमाणित मात्रा है।

मात्रापूर्वक भोजन से लाभ– मात्रा युक्त भोजन, खाने वाले व्यक्ति को प्रकृति में बाधा न पहुंचाते हुए उसे निश्चय ही बल, वर्ण, सुख और पूर्ण आयु से युक्त करता है। अर्थात् भोक्ता पुरुष बल, सुख और पूर्ण आयु से सम्पन्न होता है।

आयुर्वेद में अस्ट आहारविधिविशेषायतन का वर्णन किया गया है इसके अनुसार आहर करने से व्यक्ति सदैव स्वस्थ रहता है।

अस्टविधि आहार–विधि विशेष आयतन– उसमें ये आठ आहार–विधि विशेषायतन होते हैं। जैसे (1) प्रकृति, (2) करण, (3) संयोग, (4) राशि, (5) देश, (6) काल, (7) उपयोग संस्था, (8) उपयोक्ता

(1) प्रकृति (Natural Qualities)– इनमें जो स्वभाव होता है उसे ही प्रकृति कहते हैं। वह स्वभाव आहार औषध द्रव्यों में स्वभावतः रहने वाले गुरु, लघु आदि गुणों का योग है। जैसे उड़द और मूंग तथा सूअर एवं मृग का मांस।

(2) करण (Preparation)– स्वाभाविक गुणयुक्त द्रव्यों में जो संस्कार किया जाता है उसे करण कहते हैं। दूसरे गुणों को द्रव्यों में लाने का नाम संस्कार है।

(3) संयोग (Combination)– दो या अधिक द्रव्यों के मिलने को संयोग कहा जाता है। यह संयाग एक विशेष कार्य को करने वाला होता है, जो संयुक्त द्रव्य में रहने वाले एक–एक से वह कार्य नहीं होता।

(4) राशि (Quartum)– मात्रा और अमात्रा का फल निश्चय करने के लिए सर्वग्रह और परिग्रह राशियाँ हैं। (1) सर्वग्रह– सभी आहार द्रव्यों का एक पिण्ड में प्रमाणग्रहण करना सर्वग्रह कहा जाता है। (2) परिग्रह– आहार द्रव्यों का एक–एक करके प्रमाणग्रहण को परिग्रह कहा जाता है।

(5) देश (Habitat)– देश पुनः स्थान को कहते है। द्रव्यों की उत्पत्ति और उसका प्रचार देश सात्म्य को बदलाने वाला होता है।

(6) काल (Time)– काल (1) नित्यग और (2) आवस्थिक होता है। आवास्थिक काल की अपेक्षा करता है। और नित्यग काल ऋतु सात्म्य की अपेक्षा करता है।

(7) उपयोग संस्था– यह भोजन करने का नियम है। यह पचे हुए आहार के लक्षणों की अपेक्षा करता है।

(8) उपयोक्ता (User)– उपयोक्ता उसे कहा जाता है जो स्वयं आहार द्रव्यों का उपयोग करता है एवं जिसके अधीन ओकसात्मय अर्थात् शरीर सात्म्य है।

अस्टविधि विशेष आयतन से लाभ– ये आठ प्रकृति आदि के विशेष शुभाशय फल को देने वाले और आयस में एक–दूसरे के उपकार करने वाले होते हैं। अतएव उनको जानने की इच्छा करनी चाहिए।

आहार विधि–विधान– उष्ण, स्निग्ध, मात्रापूर्वक, भोजन के पच जाने पर, वीर्य के अविरूद्ध अपने मन के अनुकूल स्थान पर, अनुकूल सामग्रियों के सहित आहार को न अधिक जल्दी न अधिक देर से, न बोलते हुए, न हँसते हुए, अपनी आत्मा का विचार का आहार द्रव्य में मन लगा कर भोजन करना चाहिए।

सौन्दर्य में आहार का महत्व–

आयुर्वेद के अनुसार सुन्दरता के लिए आहार का सम्पूर्ण पाचन व परिपाक होना अत्यन्त आवश्यक है इसके अलावा उत्सर्जी पदार्थो का बाहर निकलना भी उतना ही जरूरी है जितना कि आहार का पाचन होना है। इन दोनों क्रियाओं के द्वारा व्यक्त्यिों में त्वचा सुन्दर, आंखों में चमक, चमकीले बाल, मजबूत नाखुन, उन्नत क्षमता तथा सुदृढ़ प्रकृत्ति का निर्माण होता है।

भोजन कोई भी हो यदि उसका सम्पूर्ण पाचन न हो तो यह वैला भाग बनाता है जिसे 'आम' कहते हैं, यह आम पाचन क्रिया को रोकता है और जीवनीय स्त्रोतों में अवरोध उत्पन्न करता है। अच्छा पाचन बुद्धिमता पूर्ण तथा कुशलता से आहार के चयन पर भी निर्भर करता है। पाचन में सहायक होने वाले कुछ महत्वपूर्ण बिन्दु निम्नलिखित है।

<u>पाचन में सहायक मुख्य बिन्दु</u>

(1) यदि 'आम' बनने के संकेत मिल रहें है। जैसे आवरित जीभ, गैस, धूमिल मूत्र, मिचली या पाचन क्रिया अवरोध तो ऐसी परिस्थिति में पाचन तस्व को समय देना

चाहिए ताकि वह स्त्रोतों को शुद्ध कर सके इसके लिए उपवास रखें या जब तक खाने की इच्छा न हो तब तक कुछ नहीं खाना चाहिए।

(2) कभी भी गुस्से में (क्रोध), अवसाद में ग्राथकी अवस्था में भोजन न करें।

(3) खाने से पहले नहाना चाहिए यदि ऐसा सम्भव न हो तो अपने हाथों व चेहरे को धो लें।

(4) जितना सम्भव हो, घर पर ही भोजन करें। प्रेम और पूरे ध्यान से बनाया गया भोजन, लाभ पाने के लिए बनाया गया भोजन से कई गुना अच्छा होता है।

(5) भोजन को पूर्ण रूप से शान्त होकर करें। इसके लिए अकेले या अपने दोस्त या परिवार के साथ भोजन करें।

(6) भोजन साफ स्थान पर करें तथा पूर्णदिशा की ओर बैठकर भोजन करें।

(7) भोजन के साथ कोई भारतीय संगीत सुने, यह पाचन में सहायक होता है।

(8) भोजन के साथ थोड़ा–थोड़ा करके गरम पानी लें यह भी पाचन में सहायक होता है।

(9) भूख को बढ़ाने के लिए अदरक की सहायता लें। इसको छोटे–छोटे पीस करके इसमें थोड़ी मात्रा में नीबूं का रस तथा थोड़ा नमक मिलायें।

(10) कच्चा भोजन न खायें। पका भोजन पचने में आसान होता है।

(11) भोजन सभी रसों से परिपूर्ण होना चाहिए।

(12) सदैव ताजा, स्थानीय तथा मौसमानुसार भोजन करें।

(13) भोजन करने के पश्चात् धन्यवाद दें।

(14) मुहँ को साफ करें, आंखों को धोएँ तथा कुछ समय टहलें।

(15) खाने के मध्य 3 से 6 घण्टों का अन्तराल रखें।

(16) हमेशा भोजन एक ही समय पर करने की कोशिश करें।

(17) भोजन के दौरान या तुरन्त बाद टेलीविजन देखने से पाचन पूरी तरह नहीं होता।

भोजन के चयन हेतु मुख्य बिन्दु

(1) जितना सम्भव हो सके कार्बनिक भोजन का चयन करे, 4 न केवल विषयन्य रसायनों को कम कहते है बल्कि ये खनिज पोषक तत्वों से भरपूर होते है जो त्वचा, बाल, नाखुन तथा स्वभाव के लिए जरूरी होते हैं।

(2) अपने क्षेत्र में या 400 मील की दूरी तक उत्पन्न होने वाले भोजन का ही सेवन करें क्योंकि वह अन्न जो उसी पर्यावरण में उत्पन्न होगा वह स्वास्थ्य के लिए अधिक लाभदायक होगा।

(3) मौसम के अनुसार भोजन का सेवन करें, जिस मौसम में जो आहार होता है वह ताजा तथा पोषक तत्वों से भरपूर होता है यह तरोताजा रखता है तथा जीवनीयांश को बठाता है।

(4) हमेशा आहार अपने दोष के अनुसार चयनित करे।

(5) इसके अतिरिक्त इस बात का ध्यान रखें कि किस मौसम तथा दिन के किस समय में कौन सा दोष प्रभावी रहता है तथा उसके अनुसार चयन करें।

(6) वात पतझड़ तथा शीत ऋतु में अधिक होता है तथा दोपहर के पश्चात् वात सदैव अधिक होता है।

(7) पित्त उष्ण ऋतु में अधिक तथा दिन में सदैव अधिक होता है।

(8) कफ बसन्त ऋतु में अधिक तथा सदैव प्रातः काल तथा सायं को होता है।

दोषों के अनुसार भोजन के चयन हेतु अन्य महत्वपूर्ण बिन्दु

सदैव ताजा भोजन लें, फास्ट फुड़ न लें।

हमेशा अधिक उष्ण तथा आधिक शीत भोजन न लें।

अधिक कच्चा तथा अधिक पका भोजन न लें।

दूध तथा मांस का सेवन भी न करें।

सदैव शुद्ध जल पियं। आसुत जल का सेवन न करें क्योंकि इसमें खनिज लवण नहीं होते तथा यह अस्थियों को, दांतो को, नाखुनों को तथा वालो को कमजोर करता है। भोजन को अच्छी तरह चबायें, कम से कम तब तक जब तक कि भोजन द्रबीयुक्त न हो जाय।

भोजन को लस्सी से समाप्त करें जिसमें कि जीवित ऐसिडोफिलस वैक्टीरिया हो ये पाचन में सहायक होते हैं।

दोषों के अनुसार भोजन करना

आयुर्वेद में भोजन को 'गुणों तथा रसों' के आधार पर वर्गीकृत किया जाता है। मुख्यतः 6 गुणों का वर्णन है।

गुरु	लघु
रुक्ष	स्निग्ध
उष्ण	शीत

और रस भी मुख्यतः 6 हैं।

मधुर	कटु
अम्ल	तिक्त
लवण	कषाय

भोजन को गुण तथा रस के अनुसार लेने का ताप्पर्य किसी दोष को बढ़ाने अथवा घटाने से नहीं बल्कि दोषों को सन्तुलित करने से है। दोषों को सन्तुलित करने के लिए दोष के जो सामान्य गुण होते हैं भोजन के गुण उसके विपरीत होने चाहिए।

जैसे– वात कक्ष, शीत तथा चल गुण वाला होता है अतः इस दोष को सन्तुलित करने हेतु भोजन स्त्रिन्ध, उष्ण तथा नियमित समय पर लेना चाहिए। हमें दोषों का समय पता होना चाहिए तथा उसके अनुसार भोजन लेना चाहिए जो दोषों को सन्तुलित बनाये रखते है। 6–10 तक कफ काल = 8 बजे से पहले नाश्ता ले यह हल्का होना चाहिए। वात वाले व्यक्तियों को पोषक नाश्ता लेना चाहिए। कफ वाले व्यक्ति या तो पूर्ण रूप से कुछ न ले या कोई पेय ले सकते हैं। पित्त वाले व्यक्ति हल्का नाश्ता ले सकते हैं ताकि वे दोपहार के भोजन तक अधिक क्षुधातुर न हो।

10.–2 तक पित्त काल – यह नाश्ता या दिन के खाने के लिए उपयुक्त समय है। पित्त वाले व्यक्ति जल्दी दिन का भोजन लेने के लिए तप्पर रहते हैं। बात वालों को थोड़ा भोजन लेना चाहिए, और कफ वालों को मुख्य भोजन हल्का लेना चाहिए।

2–6 वात काल– वात व पित्त वाले व्यक्तियों को 3 से 4 के बीच अपनी ऊर्जा को बनाये रखने के लिए अल्पभोजन या जलपान लेना चाहिए। सभी दोषों वाले व्यक्तियों को शाम का भोजन 6 बजे से पहले लेना चाहिए।

6–10 कफ काल– इस वक्त को पाचक क्षमता कम हो जाती है। वाले वालों को अल्पाहार, पित्त वालें को फल इत्यादि लेने चाहिए। कफ प्रकृति वालों को केवल चाय लेनी चाहिए।

वत प्रकृति वाले व्यक्तियों के लिए उपयुक्त भोजन

(1) वात प्रकृत्ति वाले व्यक्तियों की भूख तथा दिनचर्या अनिश्चित होता है अतः उन्हें अच्छा भोजन सम्पूर्ण मात्रा में लेना चाहिए तथा बार–बार खाने से बचना चाहिए।

(2) वात व्यक्तियों के लिए भोजन उष्ण, गुरु, स्निग्ध, पोषक तथा सन्तोषजनक हो, उष्ण भोजन सर्वाधिक लाभकारी है।

(3) मसालों तथा नमक का कम से कम प्रयोग करें।

(4) फास्ट फुड का सेवन न करें।

(5) भोजन को पूर्ण ध्यान देकर करें अर्थात् भोजन करते वक्त केवल भोजन करें। टी॰वी॰ इत्यादि ने देखे।

पित्त प्रकृति वाले व्यक्तियों के लिए उपयुक्त भोजन

(1) पित्त प्रकृति वाले व्यक्तियों में भूख की अधिकता होता है, इसे समय–समय पर सन्तुष्ट करने की आवश्यकता होती है। यदि भूख सन्तुष्ट न हो तो भूख और बढ़ जाती है जिससे व्यक्ति में चिड़चिड़ापन तथा यहाँ तक कि क्रोध भी आता है।

(2) पित्त व्यक्तियों को शीत, थोड़ा आर्द्र और थोड़ा गुरु भोजन लेना चाहिए। नमक का सेवन कम से कम करें।

(3) देर रात्रि में भोजन करने से बचें।

(4) क्रोध, चिड़चिड़ापन में भोजन न करें।

(5) मजबूत पाचन शक्ति के होने से अधिक भोजन से बचाना चाहिए।

(6) अधिक लवणीय, चिकनाई युक्त भोजन, अधिक पका, अधिक मसालेदार या खट्टे पदार्थों इसके साथ–साथ कैफीन, लाल माँस, अधिक अंडे, एल्कोहॉल तथा शर्करा से बचन चाहिए।

कफ प्रकृति वाले व्यक्तियों के लिए उपयुक्त भोजन

(1) उच्च गुणवत्ता युक्त भोजन करें।

(2) कम नमक, कम वसा, अधिक फाइवर युक्त तथा हल्का पका भोजन लें।

(3) कफ प्रकृति वाले व्यक्ति नाश्चे को न भी ले तो कोई फर्क नहीं पड़ता है।

(4) भोजन के पश्चात् थोड़ा टहलें, खाने के तुरन्त बाद न सोयें।

(5) एक सप्ताह में एक बार उपवास रखें।

किस प्रकार से आयुर्वेदिक आहार आपके सौन्दर्य को बनाये रखता है

(1) सभी प्रकार के अन्न एवं रेशेयुक्त आहार का अधिक प्रयोग करने से दिन भर ऊर्जा बनी रहती है। रेशेयुक्त आहार विष पदार्थों को शरीर से निस्कासित कर पाथन तंत्र को साम्य बनाये रखता है। जब आंत नियमित रूप से स्वच्छ रहती है शरीर अपचित पदार्थो से भारी नहीं रहता जोकि अन्यथा त्वचा के द्वारा निस्कासित हो जाता है।

(2) संतृप्त वसा को आहार में कम सम्मिलित किया जाना चाहिए ताकि धमनी तथा शिराजो में अवरोध न हो। अच्छा संचरण तन्त्र प्रभावी रूप से पूरे शरीर को साफ करने का कार्य करते हैं और प्राकृतिक रूप से वनज को निलम्बित करते है।

(3) शर्करा को कम लेना चाहिए जिससे कैलोरी बढ़ने से वनज बढ़ता है, रिफाइन्ड कार्बोहाइड्रेड शरीर की ऊर्जा को बढ़ाते है जिससे शरीर की शरीरिक एवं मानसिक कार्यों के लिए आवश्यकता होती है।

(4) खनिज लवण अधिक लिये जोन चाहिए जिससे शरीर जीवत एवं आवेशयुक्त रहता है। खनिजलवणों का बहुत बड़ा योजना व्यक्ति को ताजा एवं आकर्षक दिखाने में रहता है।

(5) वनस्पति प्रोटीन की माला जन्तु प्रोटीन की अपेक्षा अधि होनी चाहिए। जन्तु प्रोटीन शरीर में विष पदार्थों को बढ़ाते है क्योंकि ये पचने में काफी समय लगाते है। प्रोीन की आहार में कमी होने से व्यक्ति कृश हो जाता है।

(6) अधिक लवण लेने से मस्तिषक एवं शरीर तनावयुक्त हो जाते है। जिससे परिसंचरण धीमा होता है तथा कही–कही द्रव का जमाव हो जाता है। इस कारण से नेत्र धंस जाते हैं।

(7) उत्तेजक एवं अवसाद को का प्रयोग नहीं करना चाहिए कॉफी, सोड़ा तथा एल्कोहॉल, ये शरीर को तनावयुक्त करते हैं तथा त्वचा को ढीला करते हैं।

(8) कार्बनिक आहार का अधिक से अधिक प्रयोग करना चाहिए। ये उपजाऊ मिट्टी में होते है जिस कारण से इनसे अत्यधिक ऊर्जा तथा पोषण मिलता है।

उपवास–

उपवास से शरीर की सुरक्षा तो रहती ही है साथ ही शरीर को काफी आराम मिलता है, जो आहार ग्रहण करने से नहीं मिलता क्योंकि उपवास करने वाले व्यक्ति को प्रतिदिन आहार ग्रहण करने वाले व्यक्ति की भांति भूख लगातार परेशान नहीं करती। शरीर में रक्त का परिभ्रमण होता ही रहता है। शरीर में मल, आदि दूषित पदार्थों को दूर करने वाले अंग अपना काम लगातार जारी रखते हैं। कोशों की पूर्ति होती ही है, घाव भरते ही रहते हैं, वर्षों के अनुभव से ज्ञात हो सकता है कि उपवास के दौरान उपयुक्त सभी क्रियायें सफलतापूर्वक चलती रहती है। आहार किये बिना भी उपवास एक प्रकार का तप, आत्म शुद्धिकरण का तरीका है।

शरीर तन्त्र में विषाक्त भोजन एवं अनावश्यक अतिभार को दूर करने का यह शीघ्रतम सरलता एवं अत्यधिक दक्ष तरीका है। उपवास एक नैसर्गिक तरीका है। जिसको सभी जीवित प्राणी अस्वस्थता की दशा में उपयोग करते हैं। जीवित प्राणी का यह नैसर्गिक तरीका है, जिसके द्वारा वह पुनः संतुलन प्राप्त कर लेता है, और रोग से मुक्ति पाता है।

सहायक तत्व – विटामिन (जीवनीय तत्व)

विटामिन या टोकीफेरॉल या सुन्दरता विटामिन = यह वनस्पति तेलों जैसे बिनौला, सोयाबीन, आदि में तथा सलाद व ऐल्फाऐल्फा की पत्तियों में मिलता है।

कार्य– विटामिन ई शरीर में होने वाले ऑक्सीकरणय एवं अवकरण परिवर्तनों में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। भूमिका अदा करता है। यह कोशिकाओं के परिपक्वन एवं भिन्नन से सम्बद्ध होता है। इसकी कामी होने पर पुरुष व स्त्री दोनों में बंध्यता उत्पन्न हो जाती है।

सौन्दर्य रक्षा के लिए स्वास्थ्य रक्षा जरूरी–

सौन्दर्य और स्वास्थ्य में परस्पर बड़ा गहरा सम्बन्ध है। जिसे ठीक से समझ लेना जरूरी है क्योंकि दोनों एक दूसरे के बिना हो ही नहीं सकते है। अगर स्वास्थ्य है तो सौन्दर्य अपने आप ही होगा क्योंकि स्वास्थ्य ही वास्तविक सौन्दर्य है।

सुश्रुत संहिता सूव स्थान में लिखा है– **समदोषः समाग्निश्च समधातुमलक्रियः।**

प्रसन्नात्मोन्द्रियमनाः स्वस्थ इत्याभिधीयते।।

अर्थात् जिस व्यक्ति के शरीर में तीनों दोष (वात, फल, कफ) साम्य अवस्था में हो, अग्नियां समान हों, सातों धातुएं समान हों, मल–मूल विसर्जन की प्रक्रिया समान हो, आत्मा, इन्द्रियां और मन प्रसन्न अवस्था में ही, वही व्यक्ति स्वस्थ है यानि स्वास्थ्य को उपलब्ध है।

अगर हमें औषधि लेना पड़ रही हो तो इसका मतलब होगा हम स्वस्थ नहीं है बीमार हैं क्योंकि? **'व्याधितस्यौषधं पथ्यं नीरूजस्य किमौषधैः**

के अनुसार दवां का सेवन करना रेागी के लिए जरूरी होता है, निरोगी को औषधि से क्या मतबल? इसी प्रकार यदि हमें सुन्दर दिखने के लिए यानी सौन्दर्य को उपलब्ध

करने के लिए सौन्दर्य प्रसाधनों का उपयोग करना पड़े तो इसका मतलब होगा कि हम सुंदर नहीं है, कुरूप है कुरूपता को ढांकने के लिए और सुन्दर दिखाई देने के लिए हमें बनावटी सौन्दर्य प्रसाधनों का सहारा लेना पड़ रहा है इसका यही मतलब होगा कि हम स्वस्थ नहीं हैं वरना कुरूप न होते।

शरीर व स्वास्थ्य रक्षा में नींद का महत्व

देहवृत्तौ यथा आहारस्तथा स्वप्नः सुखो मतः।

स्वप्नाहार समुत्थे च स्थौल्य कार्श्ये विशेषतः।।

शरीर को धारण किये रखने के लिए जिस प्रकार नियमपूर्वक सेवन किय गया पौष्टिक आहार लाभकारी होता है। और स्वास्थ्य की रक्षा करने वाला होता है उसी प्रकार नियमपूर्वक उचित समयपर सोने से भी सुख व स्वास्थ्य उपलब्ध होता है। शरीर का मोटापा या दुबलापन विशेष रूप से आहार और नीद पर ही निर्भर होता है।

पथ्य – अपथ्य आहार

पथ्य आहार– रोगी को रोग मुक्त होने के बाद भी हल्का, सुपाच्य और ताजा आहार ही लेते रहना चाहिए जैसे दूध दलिया, जौ का दलिया, पुराने चावल और मूंग की दाल की खिचड़ी, मूंग की छिलके वाली दाल और दाल का पानी, साबूदाना, लस्सी, दूध से बनी पुराने चावल की पतली खीर पुरानी धान की खील, हरी सब्जियां आदि का सेवन खूब अच्छी तरह चबा चबा कर करना चाहिए।

पानी – उबाल कर ठण्डा किया हुआ पानी पीना चाहिए। बिना उबला कच्छा पानी, फ्रिज में रखा पानी, गन्दा पानी नहीं पीना चाहिए। एक बार उबला हुआ पानी दुबारा नहीं उबालना चाहिएं यदि खूब चबा चबा कर आहार को पानी की तरह पता करके निकला जाए तो भोजन के दौरान पानी पीने की जरूरत ही नहीं पड़ती फिर भी जरूरी हो तो बीच – बीच में 2 – 3 बार एक–दो घूटे पानी पी सकते हैं। पर ज्यादा मात्रा में न पिएं और भोजन के अन्त में भी एक दो घूंट से ज्यादा पानी न पिएं।

दूध – दूध पीने के आधा घण्टा बाद तक पानी नहीं पीना चाहिए। अम्लापिल, उदशूल और नलों में गैस भरी हो तो भोजन करते समय पानी के सीन पर थोड़ा थोड़ा दूध पीना चाहिए। मधुमेह और बहुमूत्र के रोगों को पानी की अपेक्षा दूध पीना ज्यादा लाभकारी होता है। पानी हमेशा बार'बार और थोड़ा थोड़ा पीना चाहिए।

मसाले– मसाले सौम्य और कम मात्रा में सेवन करना चाहिए धनिया, जीरा, सौंफ (मोटी वाली), तेजपान, चारों को समभाल लेकर कूटपीस कर मिलाकर डिब्बे में भर लें। कफ, खांसी, मुखपाक, खूनी बवासीर, जलन, रक्तप्रहार, उपदंष सुजाक व क्षय रोग आदि में इस मसाले का सेवन करना पथ्य है।

फलवाली शाक– परवल, तुरईया, लौकी, कच्चा केला, पेठा, पका केला, आदि शाक पथ्य है।

पत्ते वाले शाक– पत्ता गोभी, पालक, बथुआ, चौलाई, मेथी, गोभी के पत्ते, लोबिया आदि का शाक पथ्य है।

फल– मीटा अनार, मीठा सन्तरा, मीठे अंगूर, सेब, अनन्नास, मौसंबी, फालसा, कागजी नीबू, सीताफल।

कन्द– मूली, गाजर, शकरकन्द, छिलका युक्त आलू को भूंज कर या उबाल कर भरता बना कर रवाना चाहिए।

अपथ्यआहार– कभी ज्यादा मात्रा में कभी कम मात्रा में और बेवक्त आहार लेना 'विषमाशन' कहलाता है। खाय हुआ पदार्थ ठीक से हजम हो इसके पहले ही पुनः खा लेना 'अध्यशन' कहलाता है और पथ्य–अपथ्य दोनों प्रकार के पदार्थों को एक साथ मिला कर खाना 'समशन' कहलाता है। ये विषमाशन, अध्यशन और समशन–तीनों ही अपथय है। क्योंकि इनसे अजीर्ण और अग्निमांद्य आदि उदर व्याधियां उत्पन्न होती है।